International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 20-07-2020; Accepted: 05-08-2020; Published: 21-08-2020
www.hindijournal.com
Volume 6; Issue 4; 2020; Page No. 118-119

विश्व–वेदना के अमर गायक कविः जनार्दन प्रसाद झा द्विज

सच्चिदानन्द मंडल
शोध–छात्र, स्नातकोत्तर हिन्दी–विभाग, ति.मॉ.भागलपुर वि.वि. भागलपुर, भारत

प्रस्तावना

परिस्थितियों में आए परिवर्तनों के कारण मानव–जीवन प्रायः प्रभावित होता रहा है। इन परिवर्तनों के बीच अस्तित्व बनाए रखने और परिस्थितियों के विरूद्ध संघर्ष करने के लिए मानसिकता में परिवर्तन की जरूरत होती है। इसलिए युग के परिवर्तनों के साथ ही मनुष्य की प्रवृतियों में भी परिवर्तन हुआ। जहाँ एक ओर आदिकाल में अपने प्रतिद्वन्दियों से लोहा लेने के लिए वीर रसात्मक काव्य की रचना की गई, वहीं दूसरी ओर भक्तिकाल में पराजित भारतीय मनोवृत्ति को ईश्वर की ओर प्रवृत्त करने के लिए भक्तिकाव्य की। संपूर्ण भक्तिकाव्य तद्युगीन परिस्थितियों में परम्पराओं से प्रेरणा ग्रहण करके ही विकसित हुआ। रीतिकालीन कवियों का मन और दृष्टि सुरा और सुन्दरी के आस–पास घूमने के कारण उनकी रचनाओं में श्रृंगारिकता का बोल–बाला अधिक रहा है। भारतेन्दुयुगीन कवियों ने इसे मिटाने की भरपूर कोशिश की, लेकिन वे इनमें पूर्णतः सफल नहीं हो पाए। बाद में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने साहित्य से श्रृंगारिकता को मिटाकर उसे समाज, देश, राजनीति एवं आम जनता के दुःख दर्द से जोड़ दिया।

भारतेन्दु युग से प्रेरणा ग्रहण कर द्विवेदी–युग की काव्यधारा में मानवतावादी दृष्टिकोण का विकास किया। द्विवेदीजी ने इस युग की काव्य भाषा को संस्कार दिया, इस युग की कविता को दिशा–निर्देशित किया और हिन्दी भाषा में सक्षम रचनाओं को सामने लाकर विकास के अवरोधक तत्वों को किनारे कर दिया। मैथिलीशरण गुप्त, अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध', रामनरेश त्रिपाठी, रामचरित्र उपाध्याय, माखनलाल चतुर्वेदी आदि कवियों ने इस युग में हिन्दी को काव्य–भाषा के आासन पर बिठा दिया। ब्रजभाषा का स्थान हिन्दी ने ले लिया। इस युग की काव्य–धारा में इतिवृतात्मकता एवं मानवीय मूल्यों को महिमा–मंडित किया गया। एक ओर सामाजिक समस्याओं के समाधान प्रस्तुत किये गये, तो दूसरी ओर देशभक्ति की भावना को जगाने का प्रयास किया गया। काव्य में जनजीवन का स्पंदन दिखाई पड़ने लगा।

द्विवेदी युग के उत्तराद्ध में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में एक ऐसे छात्र कवि के रूप में विकसित हो रहे थे, जिन्होंने आगे चलकर न सिर्फ छायावादी रचनाएँ की बल्कि ''विश्व–वेदना'' जैसी अमर कविता भी दी। आज हिन्दी साहित्य उन महान् विभूति को भूलने में ही अपना गर्व अनुभव कर रही है। राष्ट्रकवि रामधारी सिंह ''दिनकर' ने द्विजजी के प्रति अपेक्षा–भाव की चर्चा करते हुए लिखा है–''छायावादी कवियों में एक समय श्री लक्ष्मी नारायण मिश्र के ''अंतर्जगत'' और जनार्दन प्रसाद झा 'द्विज' की कविताओं को मैंने भी पढ़ा था। खेद की बात है कि छायावाद की विवेचना के क्रम में अब लोग इन कविताओं का नाम भी नहीं लेते हैं। किन्तु जब छायावादी आन्दोलन अपने जोर पर था, इन दो कवियों की बानगी दिये बिना छायावाद के समर्थन की प्रक्रिया पूरी नहीं समझी जाती थी।''1 कवि जनार्दन प्रसाद झा 'द्विज' छायावादीयुगीन वेदना के अमर गायक कवि हैं। उनकी वेदना जीवन की शश्वत भावना है और किसी भी आकांक्षा की पूर्ति से उनका शमन नहीं हो सकता–

''अमर वेदना ही हो मेरे,
सकल सुखों का मीठा सार।2''

कवि ने अपनी वेदना को अमरता का विश्लेषण देकर अपनी काव्य साधना के साथ–साथ आत्म–साधना का भी विषय बना लिया है। द्विजजी की वेदना को कविता में आत्मप्रवंचना के रूप में नहीं देखा जा सकता है। वेदना या पीड़ा ही उनका मूल काव्य–द्रव्य है और उनके स्मृति से ही उन्हें काव्य प्रेरणा होती है–

''पुलक, कंपन की खा मृदु चोट
सिहर उठते प्राणों के तार।''3

विरह प्रेम का उदात्त स्वरूप है तथा प्रेम की कसौटी है। कबीर की विरहणी आत्मा इसी का सम्बल लिए हुए प्रियतम से मिलन को अधीर है तो यही विरह मीरा का सर्वस्व बनकर उसे श्रीकृष्ण के प्रेम में दिवानी बना देती है। धनानन्द के काव्य में यह प्रेम सुजान के प्रति विरह भाव के रूप में दिखाई देता है तो यही विरह ''आँसू'' बनकर ''प्रसाद'' की आँखों से बरसता है। इसी विरह वेदना ने महादेवी जी को व्यग्र बनाकर उन्हें अपनी तुलना ''नीर भरी बदली' से करने को विवश कर दिया है जैसे–

''मैं नीर भरी दुःख की बदली...
परिचय इतना इतिहास यही
उमड़ी कल थी मिट आज चली। ''4

एक कवि के रूप में द्विजजी की रचनाओं का भी प्रधान स्वर करूणा, अभाव और वेदना केन्द्रित ही रहा है। इस दृष्टि से उनका काव्य संसार महादेवी वर्मा के समानान्तर प्रतीत होता है, किन्तु दोनों की वेदनात्मक अवस्था में मौलिक अन्तर है। महादेवी में दार्शनिकता के आग्रह है जबकि द्विजजी के वेदना में तीव्रता है, प्रवाह है और अपने साथ बहा ले जाने की अपरिमित शक्ति है।

द्विजजी की वेदना इतनी गंभीर और व्यापक थी कि उसके परिणामस्वरूप उनकी राष्ट्रीय चेतना भी प्रेमधर्म बनकर रह गई। यथा–''मेरी राष्ट्रीय भावनाओं को व्यक्त करनेवाली कविताएँ भी वेदना के करूण उपकरणों का बहिष्कार करके खड़ी नहीं रह सकती।''5 उनकी वेदना के मूल में जो ''विषाद–तत्व'' है, वह

लगभग वही है, जिसे बुद्ध ने ''करूणा'' और महात्मा गाँधी ने ''अहिंसा'' और कविगुरु रवीन्द्रनाथ टैगोर ने अपने हृदय में बैठी रहकर सिसकती रहने वाली विरहिनी नारी के रूप में पहचान की थी। बस संबंध में द्विजजी की स्वीकारोक्ति है–

''हाय जहाँ बेकस की आहें
भी अपराध कहाती हो।
शांति और सभ्यता, रक्त की
सरिता जहाँ बहाती हो।''6

''द्विज'' के कवि को विश्वास था–''कविता की पवित्र भाव–भूमि को सीचने के लिए करूण रस की सृष्टि करने वाली वेदना, साधारण आभ्यन्तरिक अनुपात की तरह वैयक्तिक स्वार्थ–सीमा में बँधी हुई नहीं होती। उसका स्वरूप विराट होता है, वह विश्वव्यापिनी होती है। वह व्यथित को केवल उसकी अपनी ही व्यथा का अनुभव नही ंकराती, औरों की व्यथा में भी रूलाती है।'' 7 स्पष्टतः वेदना की इस भाव भूमि में कवि वैयक्तिकता की संकीर्णता से ग्रसित नहीं होता। वरन्, व्यष्टि में भी समष्टिमूलक भावना की अनुभूति करता है। सुख की एकरसता भी आनन्ददायिनी नहीं होती–

''बिन दुःख के सब सुख निस्सार
बिन आँसू के जीवन भर।''8

लेकिन इसका अर्थ यह नही ंकि विषाद की स्थिति में काव्य सृष्टि नहीं होती। आदिकवि महर्षि वाल्मीकि का काव्यश्रोत करूणा से ही फूटा था–

''मा निषाद ! प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।
यत्क्रौंचमिथुना देकमवधीः काम मोहितम्।''9

पंत के अनुसार

''वियोगी होगा पहला कवि, आह से उपजा होगा गान। उमड़कर आँखों से चुपचाप, वही होगी कविता अनजान।।10''

द्विजजी की कविताओं मे वेदना की तीव्रता और तरल अभिव्यंजना तीन कारणों से है–(1)व्यक्तिगत जीवन (2) तत्कालीन देश की स्थिति (3) छायावादी प्रभाव। कवि का व्यक्तिगत जीवन भी बड़े अभावों में बीता था। आर्थिक संकटों से जूझते हुए अपने चरित्र का निर्माण करना पड़ा था। स्वयं कवि के शब्दों में–''मैंने अपने जीवन का स्वयं निर्माण किया है, जीवन में दुःख झेला है। बहुत–सी ऐसी परिस्थितियाँ मेरे जीवन में आई है जिन परिस्थितियों में मनुष्य या तो खुदकुशी कर सकता है या फिर पागल हो जा सकता है। किन्तु उन परिस्थितियों में भी मैंने हँसते रहने का प्रयास किया और दुःखों से लड़ते रहने में आनन्द का अनुभव किया।''11 अर्थात जीवन की परिभाषा को कवि अच्छी तरह जानते थे और यह भी जानते थे कि हृदय के किसी प्रकार का अभाव ही कला को उत्पन्न कर सकता है यथा– ''काव्य–वेदना यदि उत्पन्न नहीं हो तो काव्यामृत भी नहीं मिल सकता।''12 कथा सम्राट मुंशी प्रेमचंद ने भी द्विजजी के इन विचारों का समर्थन किया है– ''साहित्य तो भावुकता की वस्तु है, बुद्धिवाद की यहाँ इतनी ही जरूरत है कि भावुकता बेलगाम होकर दौड़ने ना पाये।''13 लेकिन कवि वेदना का प्रादुर्भाव यह प्रेम है, जो जगत् के 'व्यवसायवाद' से कोई संबंध नहीं रखता जिसमें मोह के बदले त्याग भरा है, जो अन्धकार नहीं प्रकाश देता है, जिसमें मृत्यु नहीं जीवन–शक्ति है जो एक व्यापक तत्व है।

संदर्भ सूची

1. चक्रवाल / भूमिका / –डॉ. रामधारी सिंह दिनकर– पृ.–27
2. अनुभूति–जनार्दन प्रसाद झा 'द्विज' पृ.–35
3. वही–पृ. 83
4. प्रसाद, निराला, पन्त एवं महादेवी की श्रेष्ठ रचनाएँ–सं0 वाचस्पति पाठक–पृ0–118–119
5. अन्तर्ध्वनि / आमुख / जनार्दन प्रसाद झा द्विज–पृ0–5
6. अन्तर्ध्वनि–जनार्दन प्रसाद झा द्विज–21
7. अनुभूति / आभास / –द्विज–पृ0–8
8. पल्लव–सुमित्रानंद पंत–पृ0–131
9. रामायण (प्रथम खंड)–वाल्मीकि–पृ0–60
10. पल्लव–सुमित्रानंदन पंत–पृ0–18
11. पं0 जनार्दन प्रसाद झा 'द्विज' : संस्मरण एवं श्रद्धांजलि–सं0 डॉ0 दिवाकर–पृ0–45
12. वही
13. वरदान–प्रेमचंद–पृ0 15–16,